ISSN 2231-5187

साखी 34

प्रेमचन्द साहित्य संस्थान का त्रैमासिक

Post Off. Regd. No-G-2/VSI (E)-015/2021-22

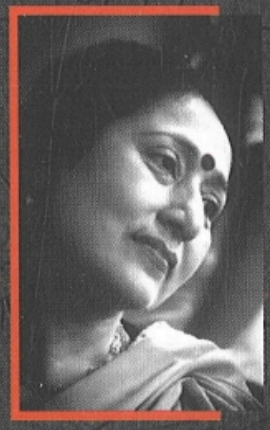

अनामिका पर विशेष

सम्पादक: सदानन्द शाही

अनामिका की कविता : लोक संवेदना का मानवीय राग

रेखा सेठी

अनामिका को साहित्य अकादमी सम्मान से सम्मानित किया गया है। इससे पहले भी स्त्री-रचनाकारों को यह सम्मान मिला है लेकिन अनामिका ने अपने निज को सदा बहनापे के संबंध में इतना विस्तृत किया है कि आज उनके सम्मान पर बहुत से लोग खुद को सम्मानित अनुभव कर रहे हैं। एक युवा कवयित्री ने लिखा है—'आकाश सी विस्तृत, पृथ्वी से विनम्र'। पूरा फेसबुक बधाई संदेशों के साथ साथीपन और साझेदारी के वृत्तांतों से भर गया है। अंतरंगता का जश्न हो जैसे! यह एक अनूठा अनुभव है। अनामिका को यह सम्मान 'टोकरी में दिगंत : थेरीगाथा 2014' कविता-संग्रह के लिए दिया गया है। यह कविता-संकलन इतिहास और वर्तमान के बीच लगातार आवाजाही करता है। यही अनामिका की कविताओं की सबसे बड़ी सामर्थ्य भी है। सांस्कृतिक बहुलतावाद उनके रचना-धर्म में सहज समाया हुआ है। थेरीगाथा, स्त्री अभिव्यक्ति का प्रारंभिक रूप है। अनामिका ने मन की वृत्तियों को थेरियों के रूप में परिकल्पित किया और उनके साथ है स्त्रियों का भरा-पूरा संसार जो मुजफ्फरपुर नगरी में बसा है। इसका भौगोलिक लोकेल भले ही मुजफ्फरपुर हो, यहाँ बातें उन सभी स्त्री-पुरुषों की हो रही हैं जो जेन्डर के स्टीरिओटाइप को चुनौती दे रहें हैं। नए पुरुष का प्रतिरूप प्रसूति गृह के बाहर खड़ा नया पिता भी है। बड़े शहर को उम्मीद की तरह देखती, वैशाली एक्सप्रेस से 'चलो दिल्ली' की गुहार लगाती लड़कियाँ हैं। अनामिका इन तमाम छोटे-छोटे परिवर्तनों को रेखांकित करना नहीं भूलतीं। उनके कवि स्वभाव में आग्रह भरा बड़बोलापन नहीं है। बस हल्के से कह देने भर की अदा है। उसी में विसंगतियाँ भी उजागर हो जाती हैं और संभावनाएँ भी। इस संकलन में बहुत सी यादगार कवितायें हैं जैसे—नमक, हवामहल, आम्रपाली, इतिहास, गठरियाँ, नमस्कार दो हजार चौंसठ आदि।

कविता, कथा, आलोचना सभी विधाओं में अनामिका ने स्त्री दृष्टि व स्त्री अनुभव

को केंद्रस्थ कर मानवीय अनुभव के वितान को विस्तृत किया है लेकिन क्या जो स्त्री, स्त्रियों पर कविताएँ लिखती है उसका अपने समय और समाज से कोई रिश्ता नहीं होता? साहित्यिक आलोचना में, स्त्री रचनाशीलता का मानचित्र स्त्रीसम्बद्ध विषयों की परिधि तक सीमित रखा गया। पर्सनल के पॉलिटिकल होने का आग्रह इस कदर हावी हुआ कि पर्सनल की पॉलिटिकल व्याख्याओं के इतर जो भी विषय हैं, वे स्त्री लेखन में केन्द्रीय उपस्थिति नहीं बना सके। इसका कारण स्त्रियों के रचना धर्म में निहित न होकर आलोचना की दृष्टि-बद्ध परिपाटियों में अधिक खोजा जा सकता है।

समकालीन कविता में अस्मितामूलक उन्मेष के साथ स्त्री रचनाकारों के साहित्य में स्त्री-दृष्टि और स्त्रीवादी मुहावरे को आलोचना जगत में इतनी प्राथमिकता दी गयी कि स्त्री-कविता का अपने समय और समाज से जो रिश्ता है उसकी पड़ताल अब तक लगभग अदृश्य बनी हुई है। साहित्यिक परंपरा के समुचित विकास के लिए यह आवश्यक है कि रचना और आलोचना एक दूसरे के समानांतर विकसित हों। विमर्शों की पूर्व-निर्मित कसौटियों पर रचनाओं को सुविधावादी ढंग से घटित कर देने से जो भ्रांतियाँ उत्पन्न होती हैं, वे साहित्य के लिए बड़े संकट की संकेतक हैं। दलित-विमर्श में कुछ सीमा तक और स्त्री विमर्श में बहुत हद तक विमर्शवादी सरोकारों का हस्तक्षेप, साहित्यिक रचनाशीलता को पूरी तरह आच्छादित किये हुए है। स्त्री रचनाकार स्वयं भी लेखन और मूल्यांकन के इन आग्रहों से अछूती नहीं रह पायीं जिससे स्थिति और भी जटिलतर बनती गयी है।अनामिका की कविताओं के संदर्भ में ये सभी बिंदु विशेष रूप से विचारणीय हैं।

उनकी रचनाओं में विस्तृत परिवृत्त है जो व्यापक मानवीय सहानुभूति से जुड़ा है। लेकिन फिर भी ये कविताएँ एक खास स्त्रीवादी लेंस से पढ़ी गयी हैं। उनकी ख्याति का मुख्य आधार 'स्त्रियाँ', 'दरवाज़ा', 'बेजगह' जैसी कविताएँ बनीं जो स्त्री-विमर्श की युगीन साहित्यिक अभिरुचि के अनुकूल थीं। वे स्वयं भी तब तक 'स्त्रीत्व का मानचित्र' लिख चुकी थीं तथा विश्व की अनेक स्त्री रचनाकारों की कविताओं के अनुवाद भी प्रकाशित कर चुकी थीं। उनकी कविताओं और वैचारिक साहित्य को एक-दूसरे के पूरक रूप में पढ़ा गया जिसमें स्त्री-दृष्टि की केन्द्रीय उपस्थिति बनती है। स्त्री-अनुभव, स्त्री-दृष्टि, स्त्री-भाषा और बहनापे के संबंध—अनामिका के आलोचनात्मक निबंधों में इन विषयों पर विस्तार से विचार हुआ है। उनकी कविताओं में भी यह स्वर बहुतायत में है। खासतौर पर पितृसत्तात्मक व्यवस्था में स्त्री के मन और देह की स्थिति के असंख्य बिम्ब अनामिका की कविताओं में एक कोलाज की भाँति उपस्थित हैं। ऐसे में उनकी कविताओं की स्त्रीवादी व्याख्या, एक सरल निष्कर्ष है लेकिन इन कविताओं में कुछ और भी है जो इससे अधिक महत्वपूर्ण है। मुख्य सवाल यह है कि स्त्रीवादी दृष्टि अनामिका की कविताओं के रचना-विधान को कैसे बदलती है और अपने समय और समाज से जुड़ने का, उसे बदलने का कौन-सा दृष्टि-बोध प्रस्तावित करती है?

अनामिका जिस स्त्रीवाद को प्रस्तावित कर रही हैं, वह केवल पाश्चात्य अवधारणाओं की स्त्री-मुक्ति के प्रसंगों पर आधारित नहीं है, उसकी आधारभूमि भारतीय है।

'स्त्रीत्व का मानचित्र' में ही उन्होंने स्त्रीवाद के लोकपक्ष को उजागर किया। भारतीय लोकमानस में लोकगीतों का स्त्री-स्वर, स्त्रीवाद के ठेठ भारतीय संदर्भों को अभिव्यक्त करता है। घर के भीतर बाबुल द्वारा भाई और बहन में किया गया अंतर हो या फिर ससुराल में पतिव्रता की दयनीय स्थिति, अनामिका ने भारतीय परिवारों में स्त्री-जीवन के अंतर्विरोधों को बड़ी गहराई से चित्रित किया है। उनकी कविताओं में बिंब-दर-बिंब ऐसी जीवन-स्थितियाँ उभरती हैं जिनमें परिवार के भीतर लैंगिक असमानता को चिन्हित किया जा सकता है। बचपन से लेकर वृद्धावस्था तक स्त्री-जीवन के छोटे-बड़े अंतर्विरोध, घर-परिवार में होने वाली छोटी-छोटी नाइंसाफियाँ जिन्हें वे अपने परिचित 'विट' के साथ यूँ बयान करती हैं कि उससे पीड़ा का अंदाज़ा सहज ही लगाया जा सकता है। इन तस्वीरों में कवयित्री का गहरा दर्द है और यह उम्मीद भी कि इस दर्द के बयान से आने वाले समय में स्त्रियों के लिए जीवन की तस्वीर बदलेगी।

पितृसत्ता की विडम्बनाओं और उसमें घुटती स्त्रियों के दुख-दर्द के बयान के बीच, अनामिका कभी भी भारतीय परिवार-व्यवस्था को अस्वीकार नहीं करतीं। उन्होंने कभी भी स्त्री-पुरुष को एक दूसरे के विरुद्ध प्रतिस्थापित दो ध्रुवों के समान नहीं देखा। उनकी नजर में स्त्री-आंदोलन प्रतिशोध-पीड़ित नहीं है, न ही ये स्त्रियाँ स्वयं पुरुष हो जाना चाहती हैं। "स्त्री और पुरुष की लड़ाई का व्याकरण सामंतों और आसामियों, पूँजीपतियों और मज़दूरों, औपनिवेशिक ताकतों और शोषितों के बीच की लड़ाई के व्याकरण से अलग है। स्त्री और पुरुष के बीच की यह लड़ाई दो वर्गों, दो नस्लों, दो जातियों, दो दलों, दो राष्ट्रों के बीच की लड़ाइयों से तुलनीय नहीं। सम्पन्न और विपन्न, ऊँच और नीच, शासक और शासित, गोरे और काले के बीच जो जंग छिड़ी है उनमें प्रतिपक्षियों के हित-निकाय (इंटरस्ट ग्रुप) अलग-अलग हैं, इसलिए हार और जीत वहाँ एक अलग ही मायने रखती है लेकिन स्त्री और पुरुष के बीच की लड़ाई में दो पीढ़ियों के बीच की लड़ाई की तरह हित-निकाय अलग-अलग नहीं होते। हित-निकाय एक ही होता है—परिवार। यह अच्छा है कि बुरा मैं नहीं जानती।"[1]

अनामिका की कविताओं का स्त्री-पक्ष अन्य स्त्री रचनाकारों से कई मायनों में भिन्न है। उनकी दृष्टि में स्त्री-पुरुष के हित-अहित परस्पर विरोधी न होकर, परस्पर संबद्ध हैं। अनामिका की वास्तविक चिंता जेंडर स्टीरीयोटाइप्स को लेकर है जो लज्जा, प्रेम, सहिष्णुता, धैर्य, सहकारिता जैसे गुणों को सिर्फ स्त्री खाते में डालकर पुरुष को रोबीला, बलवान और आक्रामक बनने पर मजबूर कर देते हैं। ऐसी इकाइयों से निर्मित सामाजिक ढाँचे में सहभागिता की भावना के बजाय अधिकार-भावना प्रमुख हो जाती है। हमारी पारिवारिक संस्थाएँ अक्सर इन विडंबनाओं से ग्रस्त हैं। अनामिका, स्त्री के स्त्रीकरण की प्रक्रिया को दृढ़ करने वाले अंतर्विरोधों को उजागर करते हुए स्त्री की पीड़ा की साक्षी देती हैं और उसको निरस्त करने की योजना के तहत यह प्रस्तावित करती है कि स्त्री-दृष्टि व स्त्री-भाषा के द्वारा लिंगाधारित अतिरेक धो डालने चाहिए—"बराबर का यह साथ तभी हो सकेगा जब पुरुष अतिपुरुष न रहें और स्त्रियाँ अतिस्त्री। एकध्रुवीय विश्व न माइक्रो स्तर पर अच्छा है, न मैक्रो स्तर पर। संतुलन

ही सुख का मूलमंत्र है... सरप्लस न क्रोध का चाहिए, न कामना का।''[2] जिस संतुलन की बात यहाँ अनामिका करती हैं वही उनकी स्त्री-दृष्टि व कविता-दृष्टि का केंद्र बिंदु है।

यह स्त्रीवाद की अलग पृष्ठभूमि है जो संबंधों में पनपते भारतीय समाज के लोकपक्ष से गढ़ी गई है। उन्होंने अपने स्त्रीवाद को विद्रोह-पताका बनाने की अपेक्षा धीमे से मन में उतरने वाली बात बनाना श्रेयस्कर समझा है। इतिहास और पुराकथाओं के स्त्री-पात्र भी कविता की इस दुनिया के स्थायी निवासी हैं। अनामिका इन सबसे संवाद करते हुए जो स्त्री-दृष्टि विकसित करती हैं, उसमें स्त्री के वर्तमान की आवाजाही, उसके अतीत और भविष्य में लगातार बनी रहती है। इससे भविष्य का जो नक्शा उभरता है, उसमें भावस्थिति तथा परिस्थिति के परिवर्तन का खुद्दारी-भरा संकल्प है। उसमें मुक्ति की दो तदबीरें प्रमुख हैं—स्त्री की साहसपूर्ण छवि और पुरुष का मन माँझने की जरूरत। उन्हें इस बात में गहरा विश्वास है कि समय के साथ, स्त्री और पुरुष के बीच संवेदनात्मक साझेदारी का नया रिश्ता तैयार होगा और लैंगिक असमानताएँ निरस्त हो जायेंगी।

भारतीय समाज की लोकवादी परंपरा में मनुष्य की सामूहिक उपस्थिति है। विशेष तौर पर स्त्रियों के जीवन में उनकी एकल उपस्थिति नहीं होती बल्कि पूरा एक मोहल्ला रहता है जिसमें चाचियाँ, मौसियाँ, बूढ़ी औरतें—सब एक-दूसरे का दुख-दर्द बाँट लेती हैं। 'कमरधनियाँ' को कमर पर कसे रखने का बोझ कितना भी क्यों न हो लेकिन उसकी रुनझुन में जो सामूहिकता है, वह संबंधों के ग्राफ को स्पृहणीय बनाती है।

काम के बोझ से कमर टूटी जिनकी,
उनकी भी होतीं कमरधनियाँ,
चाहे गिल्लट की होतीं, लेकिन होतीं!
झनझन-झन बजतीं वे
मिल-जुलकर मूसल चलाते हुए![3]

अनामिका की स्त्री-संबंधी ये सभी कविताएँ अलग-अलग न होकर एक लम्बी कविता लगती हैं। उन्होंने इन छोटे-छोटे आख्यानों को काव्य-युक्ति की तरह प्रयुक्त किया है। वे इन छोटे-बड़े अनुभवों को एक धागे में पिरोकर एक-दूसरे का संदर्भ बना देती हैं, उससे मन पर स्त्री-जीवन की पीड़ा का स्थायी निशान अंकित हो जाता है।

भारतीय लोकमानस में स्त्रियों की इस सामूहिक उपस्थिति को उन्होंने स्त्रीवाद की प्रस्तावना के रूप में फोरग्राउंड किया है। भारतीय स्त्री के लिए अस्मिता की असली तलाश केवल उसकी निजता तक सीमित नहीं है, वह उसके संबंधों में पूर्णता पाती है। यह पारिवारिक फ्रेमवर्क, अनामिका विश्व के बड़े-बड़े द्वंद्वपूर्ण संबंधों पर लागू करती हैं। उनके अनुसार तमाम पदानुक्रम को खत्म करने के लिए जरूरी है कि चटाई बिछाई जाए और जिस तरह घर-परिवार में चटाई पर सब साथ हो जाते हैं, ऐसे ही दुनिया में जहाँ-जहाँ भी ऊँच-नीच के फासले हैं, उन्हें खत्म करने के लिए सबको एक चटाई पर ले आना आवश्यक है। अनामिका ने भारतीय परिवार के इस रूपक को केवल स्त्रीवाद ही नहीं, तमाम असमानताओं को खत्म करने तथा

मनुष्य को एक तार में जोड़ने की कोशिश के रूप में प्रस्तावित किया है। साहित्य के स्त्रीवाद को उन्होंने सामाजिक संरचनाओं में समानता के प्रतिमान के रूप में उपस्थित किया। यही वह बिंदु है जिसमें स्त्रीवाद व्यापक मानवीय समता-बोध में विस्तृत हो जाता है।

सामाजिक अंतर्विरोध उजागर करती हुई, यह कविता एक नया मानवीय संवेदन प्रस्तावित करती है जो आघातों से छलनी होते मनुष्य को सहानुभूति व संवेदना की तरलता देकर उसके जख्मों पर मरहम रखने का काम करता है। इस कविता को व्यापक मानवीय सहानुभूति के लिए भी पढ़ा जाना चाहिए जो विमर्शों और विचारधाराओं में कैद नहीं है। तभी उसकी पूरी तस्वीर बनेगी। कवयित्री की दृष्टि मूलतः उन विसंगतियों एवं विडंबनाओं पर केन्द्रित है जो मानवीय गरिमा को चोट पहुँचाती हैं। ये कविताएँ दर्द की स्वरलिपियाँ हैं–

यही एक काम किया मैंने
हर तरह के दर्द की डगमग
स्वरलिपियाँ सीखीं।[4]

अनामिका की ऐसी कविताओं की लंबी फेहरिस्त बनाई जा सकती है जिनमें सामाजिक दृष्टि से हाशियाकृत वर्ग के विविध स्वर हैं। स्त्रियाँ भी जब कविता में आती हैं तो उनकी आवाज हाशिये की आवाज ही होती है। 'बारिश और बेघर', 'खाली बटुआ', 'बाज़ लोग', 'साध्य', 'गणतंत्र दिवस', 'घरेलू नौकर', 'दंगे और कर्मकांड', 'पत्ता-पत्ता बूटा-बूटा', 'मोतिया बिंद', 'कैदियों के जूते', 'अमीर खुसरो', 'छिटकी हुई ईंटें', 'दलित महासंघ की बैठक से लौटते हुए', 'बेरोज़गार', 'भूख', 'कूड़ा बीनते बच्चे', 'गठरी', 'नशेड़ी', 'बंदी गृह', 'ध से धमाका', 'थर्मामीटर' या फिर 'निर्भया' की माँ पर लिखी कविताएँ जिनमें निर्भय के बाद का बारहमासा दर्ज है–कितनी ही कविताएँ हैं जो समय, समाज व परिवेश को लेकर एक संवेदनशील मन की सहज प्रतिक्रियाएँ हैं।

इन कविताओं में स्याह-सफेद के सरलीकृत समीकरण नहीं हैं, उनकी जगह ऊपर से बेतरतीब दिखने वाली पंक्तियों की ऐसी समायोजना है कि वे एक-दूसरे के सन्दर्भ में तीव्रता हासिल कर लेती हैं और हमारे समय से लुप्त होती मानवीयता के पक्ष में खड़ी होती है। मानवीय सहानुभूति अर्जित करने और जीवित रखने के लिए अनामिका ने 'आदमी के आदमी पर भरोसे' की बात कही है। आज की संवेदनहीनता का सबसे बड़ा हर्जाना जो हमने चुकाया है वह इस विश्वास सूत्र के टूटने का ही है।

टुइयाँ-सी चीज़ है भरोसा!
हमने उसे कहाँ-कहाँ नहीं ढूँढा!
दोस्तों की आँखों, भाई की पॉकेट,
दादी के बटुए, बच्चों के गुल्लक से भी
वह जाने कब और कैसे
झड़ गया था![5]

समाज में जब हर जगह से भरोसा छूट रहा है तब कवयित्री को वह मिलता है अचानक एक रिक्शे वाले से। अपने संवाद में अनामिका जीवन की छोटी-छोटी स्थितियों में बड़े सत्यों का अन्वेषण कर लेती हैं। कहीं-कहीं सूत्रात्मक शब्दावली में इसे अभिव्यक्त कर सूक्तियाँ गढ़ देती हैं तो कहीं प्रचलित सूक्तियों-लोकोक्तियों का प्रयोग कर एक अतिरिक्त आयाम देती हैं। निज़ामुद्दीन मोहल्ले पर लिखी कविताएँ भी ऐसे ही प्रयास में शामिल हैं। कुछ कविताओं में पत्रों से सीधे संवाद का प्राथमिक अनुभव शामिल है जिन्हें कवयित्री यूँ अभिव्यक्त करती है—'डीयू रिज पर वह मिला था', ...या फिर 'मुझे ट्रेन में एक लड़का मिला था',... ऐसी सभी काव्य-पंक्तियाँ हमारे लोकतंत्र और सामाजिक व्यवस्था को उसके सच्चे रूप में देखने का आईना हैं। 'कवि ने कहा' के 'आत्मकथ्य' में अनामिका ने लिखा है—''वास्तविक जीवन-जगत के चरित्र हों या क्लासिकों के चरित्र—मेरी कल्पना के स्थायी नागरिक वही बनते हैं जिन्हें कभी न्याय नहीं मिला, जो हमेशा लोगों की गलतफहमी का शिकार हुए, दुनिया ने जिन्हें कभी न प्रेम दिया, न मान। भीतर से वे जितने अगाध होते, उतने ही अकेले।''[6]

इस कविता की मनोभूमि में अनेक तत्त्व एक साथ सक्रिय हैं। 'अनुष्टुप' के फ्लैप पर दी गई केदारनाथ सिंह की टिप्पणी में इस ओर ध्यान दिलाया गया है—''स्त्री रचनाकारों में—खासतौर से नारीवादी लेखन में, इधर जो प्रवृत्तियाँ दिखाई पड़ती हैं, अनामिका का काव्य-व्यवहार उनसे थोड़ा अलग है। ...अपनी जानी-पहचानी दुनिया में उनकी दृष्टि प्रायः वहाँ टिकती है, जहाँ कोई टूट-फूट होती है या फिर सारी आपात समरसता के भीतर कोई फाँक या दरार। वे अक्सर संकेतों, रूपकों या लोक-अभिप्रायों से काम लेती हैं। इस तरह कविता का एक जटिल तंत्र विकसित होता है, जिसका संबंध रूप से कम और भाव तत्त्व की अंतर्वस्तु से अधिक होता है।''[7] वे साधारण-सी उक्ति को बड़े फलक पर तान देती हैं। जैसे 'नमक' कविता में—

नमक दुःख है धरती का और उसका स्वाद भी!
पृथ्वी का तीन भाग नमकीन पानी है
और आदमी का दिल नमक का पहाड़
कमजोर है दिल नमक का
कितनी जल्दी पसीज जाता है!
गड़ जाता है शर्म से
जब फेंकी जाती हैं थालियाँ
दाल में नमक कम या जरा तेज होने पर!

वो जो खड़े हैं न—
सरकारी दफ्तर—
शाही नमकदान हैं

बड़ी नफासत से छिड़क देते हैं हरदम

हमारे जले पर नमक!

जिनके चेहरे पर नमक है
पूछिए उन औरतों से—
कितना भारी पड़ता है उनको
उनके चेहरे का नमक!

जिन्हें नमक की कीमत करनी होती है अदा—
उन नमकहलालों से
रंज रखता है महासागर!

दुनिया में होने न दीं उन्होंने क्रांतियाँ,
रहम खा गए दुश्मनों पर!

गाँधी जी जानते थे नमक की कीमत
और अमरूदों वाली मुनिया भी!

दुनिया में कुछ और रहे-न-रहे
रहेगा नमक—
ईश्वर के आँसू और आदमी का पसीना—
ये ही वो नमक है जिससे
थिराई रहेगी ये दुनिया।

इस कविता की एक-एक पंक्ति अनामिका की कविताओं में अनुभूति की बनावट का वैशिष्ट्य उजागर करती है। हमारी श्रुतियों और स्मृतियों में नमक से जुड़े अनेक प्रसंग हैं—घर की रसोई से लेकर सरकारी दफ्तरों तक, जले पर नमक छिड़कने के भाषिक मुहावरे, औरतों के चेहरे की लुनाई, नमक-हलालों की हक-अदायगी और गाँधी का सत्याग्रह। पूरी कविता 'नमक' के माध्यम से स्त्री-सौंदर्य, आँसुओं में अभिव्यक्त उसकी विवशता, गाँधी के सत्याग्रह और सड़क पर अमरुद बेचती मुनिया को एक-साथ ले आती है। इनसे समाज का वृहद रूपक बनता है, जिसका चरित्र समावेशी है। संभवतः इस सामाजिक दृष्टि का निर्माण अनामिका की स्त्री-दृष्टि से होता है, नहीं तो दाल में नमक के कम-ज्यादा होने का बिम्ब यहाँ नहीं होता। इसके साथ ही कविता का आरम्भ और अंत अलग चमक के साथ उद्घाटित होते हैं, वही कविता का स्थायी भाव है। 'नमक दुःख है धरती का और उसका स्वाद भी!' दुःख और स्वाद, स्त्री की नजर में ही एक हो पाते हैं। स्थापना के रूप में प्रस्तावित इस वाक्य का ही विकास पूरी कविता में होता है और कविता जिस निष्कर्ष की ओर बढ़ती है उसमें 'ईश्वर के आँसू' और 'आदमी का पसीना'

एक हो जाता है। यह करुणा का वह चिदाकाश है जिसे अनामिका स्त्री-रचनाशीलता का मूल प्रत्यय मानकर अनेक कविताओं में दोहराती हैं।

'लोक' की आधार-भूमि तथाकथित कुलीनतावादी संस्कारों से टकराती हुई संबंधों और समाज में व्याप्त पदानुक्रमों की संरचना को चुनौती देती है। परंपरा, श्रुति और स्मृति इस विशिष्ट अनुभव को घना बनाते हैं। दूसरी ओर तर्क करता विवेकशील मानस, संबंधों के आवरण में छिपी सच्चाइयों को अनावृत्त करता है। साधारण स्थितियाँ बड़े सामाजिक आशयों की सांकेतिक अभिव्यक्ति में घटित होने लगती हैं। 1995 में, अनामिका की काव्य-यात्रा के शुरुआती दौर में लिखी गयी कविता 'चुटपुटिया बटन' भी इसी विशेषता के रहते इतनी लोकप्रिय हुई। कविता, अनेक स्तरों पर एक साथ घटित होती है—

ऊँच-नीच के दर्शन में उनका कोई विश्वास नहीं था
बराबरी के वे कायल थे!
फँसते थे न फँसाते थे—चुपचाप सट जाते थे।[8]

अनामिका की कविता दैनंदिन स्थितियों को गहरी अंतर्दृष्टि से सजीव करती है। ये छोटे-छोटे ब्यौरे उन सामाजिक प्रक्रियाओं को समझने में मदद करते हैं जो सतह के भीतर अदृश्य रूप में सदा गतिमान रहते हैं। ये कविताएँ स्त्री-दृष्टि से की गई सामाजिक समीक्षा है। वे अपने आस-पास के छोटे-छोटे घटना-प्रसंगों को अपनी चिंता के दायरे में लाकर उन्हें ममतापूर्ण सहानुभूति का संस्पर्श देती हैं। अंग्रेजी मुहावरे 'टचिंग लाइव्स' की तर्ज पर ये कविताएँ अपने आसपास के जीवन को करुणा और सहानुभूति से छूती हैं। अनामिका के इस काव्यानुभव पर प्रियदर्शन ने लिखा—"कहने की जरूरत नहीं कि स्त्रीत्व सहज ढंग से इस परंपरा की पुनर्व्याख्या और पुनर्रचना भी करता रहता है... उनके जो बिंब कविता में हमें बहुत अछूते और नए लगते हैं, जीवन की एक धड़कती हुई विरासत का हिस्सा हैं, उसी में रचे-बसे, उसी से निकले हैं और अनामिका को एक विलक्षण कवयित्री में बदलते हैं।"[9]

शेक्सपियर की पंक्ति 'टू बी और नॉट टू बी' की तर्ज पर कवयित्री स्त्री-मन के स्थायी अंतर्द्वंद्व को लक्षित करती है। जीवन की इस विडंबना को जीना शेक्सपियर के ही महान पात्रों की तरह ट्रेजिक है। स्त्री-मन और स्त्री-जीवन के छोटे-बड़े आख्यान भारतीय स्त्री की कभी न खत्म होने वाली महाकाव्यात्मक त्रासदी की रचना करते हैं। गैर-समानता के इन मुखर बिंबों में कवयित्री अपना मौन विरोध दर्ज करती है। उनके अनुसार 'चुप्पी का अपना ही सौंदर्यशास्त्र/ नीतिशास्त्र हुआ करता है...'। यह चुप्पी, यह चीख इन कविताओं की आंतरिक बुनावट में विन्यस्त हैं। पीड़ा और मुक्ति का गहरा अंतर्संबंध है, अनामिका इस संबंध को पहचानती हैं।

श्रुति और स्मृति इस कविता का धर्म हैं। यहाँ सुने और गुने हुए का समान महत्त्व है। समकालीन कवियों में ऐसा काव्य-व्यवहार और किसी के यहाँ नहीं होता, कभी-कभी ये कविताएँ बेतरतीब-सी भी लगती हैं जिसमें न जाने किस-किस छोर से देखने पर यह ऊपरी असंबद्धता संवेदना के एक केंद्र पर टिकी पाई जाती हैं और कभी-कभी तो यह उन्मुक्त-सा खेल रच देती हैं। कविता का यह नियमन लोक-शैली का ही विस्तार है जहाँ मन में घुमड़ते भावों को

एक विशेष लय में कह दिया जाता है जिसे संभ्रांत ढाँचों में अटाना संभव नहीं। वे कविता में आख्यान रचती हैं। गली-मोहल्ले के पात्र, किस्से कहानियों के स्रोत बन जाते हैं। 'दादी', 'भेड़िया', 'पहली पेंशन', 'सेफ्टी पिन', 'साध्य', 'हितोपदेश', 'वृद्धाएँ', 'मौसियाँ' और ऐसी कितनी ही कविताओं में अनामिका ये कहानियाँ सुनाती हैं। लोक-साहित्य व्यथा-कथा को जिस हलके ढंग से कहता है, कवयित्री भी उसी कहन शैली में बतरस का आनंद लेते हुए बड़ी कुशलता से महीन मार करती हैं। इन कविताओं का 'टोन' बहुत महत्त्वपूर्ण है। उसमें आक्रोश की जगह व्यंग्य है। यहाँ गालियाँ गोलगप्पों की तरह खाई जाती हैं गपा-गप और चुट से पट बज उठते हैं चुटपुटिया बटन। महान सत्य को उजागर कर देने वाली कविताएँ लोक गीतों की शैली पर रच दी जाती हैं—

ईसा मसीह
औरत नहीं थे
वरना मासिक धर्म
ग्यारह बरस की उमर से
उनको ठिठकाए ही रखता
देवालय से बाहर![10]

यह कविता एक रेड-इंडियन लोक-गीत के आधार पर पल्लवित है। कभी-कभी ऐसी कविताओं में कुछ शाश्वत जीवन-सत्य भी उजागर हो जाते हैं जैसे बुद्ध का आम्रपाली को यह कहना—'रह जाएगी करुणा! रह जाएगी मैत्री बाकी सब ढह जाएगा...'[11], 'टोकरी में दिगंत' संकलन में थेरियों और बुद्ध के संवादों के बीच ऐसी बहुत-सी उक्तियाँ रची-बसी हैं। बुद्ध और थेरीगाथा भारतीय सांस्कृतिक दर्शन में वह ऐतिहासिक बिंदु है जहाँ मानवीय करुणा और स्त्री-स्वर एक हो जाते हैं। इतिहास की उन गलियों में अनामिका जिन स्त्रियों को ढूँढ रही हैं, वे मनुष्य की सनातन तृष्णा, भाषा, स्मृति, मुक्ति और जिजीविषा की प्रतिरूप हैं। इसीलिए अतीत और वर्तमान एक बिंदु पर अवस्थित हैं। इतिहास को अनामिका ने जीवंत इकाई की तरह पहचाना है। 'पत्ता-पत्ता, बूटा-बूटा', जैसी कविता में सांप्रदायिक हिंसा विह्वल माहौल के प्रति मासूम प्रतिक्रिया, साहित्य के पात्र, टीवी की छवियाँ, पड़ोस के अंडे वाले-दरजी, इतिहास के पृष्ठों से हुमायूँ और ट्रांसिस्टर पर बजता फिल्मी गाना—सब मिलकर ऐसा काव्यानुभव रचते हैं, जो सांप्रदायिकता के निषेध में संवेदना को प्रतिष्ठित करने वाला है।

भारतीय दर्शन में समय की कोई स्थिर अवधारणा नहीं है। बोध और अनुभव के क्षण भौतिक समय का अतिक्रमण करते हैं। मुक्ति और करुणा की आकांक्षा में अनामिका अपना संबंध इतिहास के पन्नों में अंतःसूत्र की तरह बसे विराट मानवीय सत्य से जोड़ लेती हैं। उसमें स्त्रियों के गहन दुख की गाथा तो है ही मनुष्य के मनुष्यत्व को बाँधने और खंडित करने वाली ऐतिहासिक ताकतों की ओर भी उँगली उठाई जाती है। इतिहास की कक्षा में दो ही इकाइयाँ हैं जो ताकत के तराजू पर झूलती इधर-उधर झुकी रहती हैं। अनामिका वंचित के पक्ष में इतिहास से टकरा जाती हैं—

आज मैं इतिहास से टकरा गई
लेकिन वह मुझको पहचान ही नहीं पाया
भूल चुका था मुझको पूरा ही
भूल चुका था कि मैं उसकी ही कक्षा में थी।[12]

अनामिका की कविताओं में इतिहास जातीय स्मृति का हिस्सा बन जाता है जो लोक और शास्त्र के संघटन की आधारभूमि रचता है। इतिहास समय की कक्षा में स्थिर इकाई नहीं है। वर्तमान और भविष्य से उसका संवाद बना रहता है—

सोचो, ये टीपें क्या कहती हैं!
कहती हैं—इतिहास हरदम भविष्य-सजग रहता है,
निजता निजेतर के घर आती-जाती है,
कम-से-कम
दरवाजा
दोनों के बीच खुला रहता है हरदम।[13]

लोक, परंपरा और इतिहास से बुने गए इस काव्य-वृत्त का अपना कथा-लोक भी है। किस्सागोई मूलतः गद्य लेखकों का धर्म है, लेकिन यहाँ कविता में स्मृति के आधार पर छोटे-छोटे ब्यौरे बुने जाते हैं, इन ब्यौरों से बिंब बनते हैं जो यथार्थ का स्वरूप रचते हैं। यह बतकही, संवादधर्मिता और आख्यान एक काव्य-युक्ति की तरह प्रयुक्त होते हैं जिनके माध्यम से यथार्थ के अलग-अलग वृत्त एक धुरी पर केन्द्रित किये जा सकें। उनमें सबसे अधिक प्रयत्न इस दिशा में है कि अति विशिष्ट और दूरस्थ को पास लाकर परिचित परिधि में शामिल कर लिया जाए, जैसे आसमान में जड़े सितारे कोई हथेलियों पर उतार आये जुगनुओं की तरह महसूस कर सके। स्वभावतः उसमें रैखिक संगति नहीं है बस एक बोध है जो कविता पढ़ते हुए और उसके बाद भी बना रहता है। हम अपने भीतर आसानी से पहचान पाते हैं कि इन छोटे-छोटे स्फुलिंगों के विस्फोट किस आंतरिक आँच की तपिश को कवि और पाठक के लिए अलावकी गर्माहट में बदल रहे हैं। 'दलाईलामा' कविता को देखिए—

दलाईलामा लगातार हँसते हुए
संबोधित कर रहे थे
एक बड़ी जनसभा

कुछ कहते-कहते जो हाथ उठाया—
उनकी बाई बाँह पर मुझको दिखा
बचपन में कभी पड़ा चेचक का टीका,
और फिर सहसा ही कौंधा—
'अरे-अरे यह ऐसी बातें करने वाला
इसी लोक का है, इस युग का है और

आदमी है!''

***

इस गुलधुल बच्चे की तरह कभी
गुटुर-गुटुर दूध पिया होगा उन्होंने
खुद दुधपिलाई उठाकर,
खुद पोंछ ली होगी नाक कभी स्वेटर से
माँ को कहीं काम में मग्न पाकर
इसके ठीक अगली पंक्ति है—
क्या जानते हैं हम तिब्बत के बारे में।[14]

अनुभव की संश्लिष्टता का गाम्भीर्य और निश्छल अभिव्यक्ति का मासूमियत-भरा टोन उसे विलक्षण बनाता है। कविता में आख्यान, रूप के स्तर पर कविता की मुक्ति है जिसे अनामिका ने निजी शैली और भाषा की विशिष्टता से संभव बनाया। अध्ययन का समुच्चय उनके काव्यानुभव की बनावट को एक अलग रूप देता है। आप इन कविताओं से कवयित्री का नाम हटा भी दें तो यह अपनी बानगी से अलग पहचान ली जायेंगी। कविता के शिल्प पर अनामिका की यह टिप्पणी महत्त्वपूर्ण है—''रचना का कथ्य तो किसी-न-किसी दर्शन या विमर्श से प्रेरित होता है, उसका अपना होता है उसका शिल्प और इस शिल्प का नियामक होती है व्यक्ति की भाषा जो उसके फिंगर-प्रिंट की तरह उसकी खास अपनी होती है।''[15]

सामाजिक समानता की चिंता, पर्यावरण व प्रकृति के प्रति मनुष्य के व्यवहार, सांप्रदायिकता और हिंसा के मसले आदि सब कविता की इस दुनिया में शामिल हैं। ये सभी हमारे परिवेश और यथार्थ का हिस्सा हैं, जाहिर है इसीलिए कविता में उनकी जगह भी बनती है लेकिन अनामिका की कविता में उनका ट्रीटमेंट अलग है। निष्पत्र पेड़ धरती का थर्मामीटर हो गए हैं—

आज जब धरती का माथा गरम है
जलस्रोतों की पट्टी पूरी नहीं पड़ती
निष्पत्र पेड़ हो गए हैं
थर्मामीटर।[16]

अनामिका ने अपनी कविता में एक नई भाषा का संधान किया, कविता की अंतरंग भाषा। यह अंतरंगता बहुत महीन ढंग से काम करती है। कवयित्री का कहने का ढंग कुछ ऐसा है कि बहुत आत्मीय ढंग से बेहद मारक बात कही जाती है। उसमें एक 'विट और ह्यूमर' है। इसका संबंध कथ्य से ज्यादा उसकी प्रस्तुति से है। अनामिका मानती हैं कि स्त्री-शरीर और स्त्री-मन की तरह भाषा भी प्रकृत्या अलग होती है। स्त्री-विमर्श की बहुत-सी जद्दोजहद भाषा को लेकर हुई है। भाषा एक संकेतक है और संकेतों का यह संसार स्त्रियों की साहित्यिक प्रतिष्ठा से पहले पुरुष-सत्ता का ही प्रतीक रहा। शब्दों से लेकर उपमानों, बिंब-प्रतीकों और रूपकों तक स्त्री रचनाकारों ने अपनी कविता को अपनी छाप दी है जिसमें ''भाषणधर्मिता का स्थानापन्न सहज

संवादमय हो जाती है, पूर्णविरामों और आदेशमूलक वाक्यों का सहज स्थानापन्न, अल्पविरामों, विस्मयादिबोधक और प्रश्नबोधक वाक्य! समुच्चयबोधक चिन्हों का प्रयोग भी अधिक तरल और हँसमुख सा लगता है। स्त्री-भाषा एक ठहाके में सारे तट तोड़कर आगे बढ़ जाती है। परम खिलवाड़ी भाषा है और खेल का मतलब ही है टूट-फूट, चारदीवारियाँ फलाँगकर नए वितानों में भटककर अपने प्रश्नों के उत्तर टटोलने का दमखम।''[17]

चारदीवारी फाँदकर स्त्री-भाषा जो उड़ान भरती है, भाषा की उस मुक्ति को अनामिका की कविताओं में बखूबी महसूस किया जा सकता है। वे कहीं से भी शब्द उठा लेती हैं—तत्सम, तद्भव, देशज, विदेशी, जो शब्द जहाँ से मिले, वे सब और सब-के-सब, मुहावरे-लोकोक्तियाँ, संस्कृत के श्लोक, शेक्सपियर के उद्धरण अनामिका की कविताओं में बहनापे के तर्क से संयोजित होते हैं। यूँ तो उनकी हर कविता भाषा का खेल रचती है, फिर भी कुछ उदाहरण, भाषा की विलक्षणता दर्शाने के लिए—

''क्या प्रेम में पड़ना खटाई में पड़ना है अम्मा?''[18]

''देखो भाई, होना तो होना हवा महल!''[19]

''नमस्कार दो हजार चौंसठ।''[20]

''हे बुद्ध, आप मार्क्स से एक कांफ्रेस कॉल कर लें।''[21]

ऐसे कितने ही उदाहरण हैं जिनमें कवयित्री कभी सूक्तियों का इस्तेमाल करती हैं तो कभी सूक्तियाँ गढ़ लेती हैं। कभी बतरस के लालच में बोलचाल की मुद्रा अपना लेती हैं लेकिन भाषा का गांभीर्य वहाँ दिखता है जहाँ शब्द—अर्थ की बहुस्तरीयता ग्रहण कर कुछ अलग रोशनी में चमकते दिखते हैं।

जैसे हवा किसी पतंग को इधर से उधर बहा ले जाती है, अनामिका की कविताओं में भी भाव और विचार की ये हिलोरें उठती रहती हैं और कविता अपनी उड़ान भरती है। कुछ वो देखती हैं और कुछ उन्हें दीख जाता है यानी सतह के भीतर का सच उघड़ जाता है और फिर वह जा मिलता है मन के कोने में दबे किसी ऐसे प्रसंग से जो अतीत-परंपरा का हिस्सा हैं। उनके देखने में एक निरंतरता है। ''कविता चाहती है हमारे सपनों, हमारी जातीय स्मृतियों को अपना दूध पिलाकर हमेशा के लिए सुरक्षित कर लेना। हमारे भीतर का जो कुछ भी कोमल, उत्कृष्ट, मधुर और प्रांजल है—उसका ही बीमा चाहती है कविता।''[22]

कथ्य और अभिव्यक्ति का यह तनावपूर्ण सामंजस्य प्रायः उनकी सभी कविताओं में मिलता है। वे जिन तत्वों को कविता में अपरिहार्य मानकर लोकेट करती हैं, वह है—कविता की संवादधर्मिता और उसका आंतरिक सत्य, अनामिका की कविता स्त्री की मुक्ति है, हँसती और बतियाती हुई...

अनामिका की कविताएँ गहरी सदिच्छा की कविताएँ हैं जो यह विश्वास करती हैं कि स्त्री की करुणा और सहानुभूति से यह संसार बदलेगा जरूर। वर्चस्व के समक्ष न हारने वाली संकल्प-शक्ति भी उसमें शामिल है। अनामिका अतिवादी सरहदों पर जीने में विश्वास नहीं रखतीं। वे पुल बनना चाहती हैं 'जो दुनिया को झपाके से जोड़ दे और सबके बीच अंतरंग

गपशप वाला रिश्ता' बना सके। उनकी कविता जीवन की अनसुलझी गाँठों को सुलझाने की कोशिश है जो स्त्री-कविता को गहरी सृजनात्मक संभावना में बदल रही है।

(समालोचना ब्लाग से साभार)

सन्दर्भ :

1. स्त्रीत्व का मानचित्र, पृ. 10
2. त्रिया चरित्र : उत्तरकाण्ड, पृ. 35
3. कमरधनियाँ, पानी को सब याद था, पृ. 9
4. बेरोज़गार, खुरदुरी हथेलियाँ, पृ. 171
5. भरोसा, खुरदुरी हथेलियाँ, पृ. 141
6. कवि ने कहा, पृ. 5
7. अनुष्टुप के फ्लैप से
8. चुटपुटिया बटन, दूब-धान, पृ. 183
9. प्रियदर्शन, पुस्तक वार्ता, 20 मई 2015
10. मरने की फुर्सत, दूब-धान, पृ. 28
11. आम्रपाली, टोकरी में दिगंत, दूब-धान, पृ. 14
12. इतिहास : क्रांति चौक, टोकरी में दिगंत, पृ. 110
13. सेकंड हैंड चीज़ें, राष्ट्रीय सहारा, 20 फरवरी, 2012
14. दलाईलामा
15. संवाद, नया ज्ञानोदय, जून 2017, पृ. 23
16. थर्मामीटर, टोकरी में दिगंत, पृ. 17
17. स्त्री-भाषा की सविनय अवज्ञा, साहित्य अकादमी में पढ़ा गया प्रपत्र, 'मित्र' में प्रकाशित
18. लेडिज़ संगीत, दूब-धान, पृ. 47
19. हवामहल, टोकरी में दिगंत, पृ. 155
20. नमस्कार दो हज़ार चौंसठ, टोकरी में दिगंत
21. दुःख की प्रजातियाँ, टोकरी में दिगंत, पृ. 152
22. अनामिका, अनुष्टुप, पृ. 8